

इक्कीसवीं सदी के गीतकाव्यों में सामाजिक चेतना

शिखारानी



शोधच्छात्रा, संस्कृत तथा प्राकृत भाषा विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ

शोध सार

किसी भी युग का साहित्य उस युग की सामाजिक परिस्थितियों, मानवीय आकांक्षाओं, संघर्षों, विसंगतियों और परिवर्तित जीवन-मूल्यों को अपने भीतर समाहित करता है। गीतकाव्य साहित्य की ऐसी विधा है जिसमें वैयक्तिक अनुभूति के साथ-साथ सामूहिक संवेदना को भी अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया जा सकता है। इक्कीसवीं सदी के गीतकाव्य में प्रेम, प्रकृति और सौन्दर्य जैसे परम्परागत विषयों के साथ सामाजिक सरोकारों का विस्तार हुआ है। सामाजिक विषमता, स्त्री-अस्मिता, दलित चेतना, श्रमिक जीवन, ग्रामीण संकट, नगरीकरण, वैश्वीकरण, पर्यावरण-सङ्कट, आतङ्कवाद, युद्ध, विस्थापन, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, राजनीतिक विडम्बनाएँ, तकनीकी परिवर्तन तथा मानवीय मूल्यों के क्षरण जैसे अनेक प्रश्न आधुनिक गीतकार की संवेदना के केन्द्र में आए हैं। इक्कीसवीं सदी का गीत केवल मनोरञ्जन अथवा भावाभिव्यक्ति का माध्यम नहीं रह गया है, बल्कि वह सामाजिक यथार्थ के प्रति सजग दृष्टि विकसित करने वाला साहित्यिक माध्यम भी बना है। इस गीतकाव्य में व्यक्ति और समाज के पारस्परिक सम्बन्ध, परम्परा और आधुनिकता का द्वन्द्व, विकास और मानवीयता के बीच उत्पन्न तनाव तथा बदलते सामाजिक मूल्यों की आलोचनात्मक पड़ताल दिखाई देती है। प्रस्तुत शोधपत्र में इक्कीसवीं सदी के गीतकाव्य में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना के विविध आयामों का विवेचन करते हुए यह प्रतिपादित किया गया है कि- समकालीन गीत सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा, मानवीय संवेदना और लोकमङ्गल की भावना से निरन्तर जुड़ रहा है।

Keywords: इक्कीसवीं सदी, गीतकाव्य, सामाजिक चेतना।

‘सामाजिक चेतना’ का आशय समाज की परिस्थितियों, समस्याओं, अन्तर्विरोधों, मानवीय सम्बन्धों तथा परिवर्तनशील मूल्यों के प्रति सजग और संवेदनशील दृष्टि से है। जब साहित्यकार समाज में व्याप्त किसी समस्या, अन्याय, असमानता अथवा विघटन को केवल विषय के रूप में प्रस्तुत न करके उसके प्रति अपनी मानवीय संवेदना और परिवर्तन की आकांक्षा व्यक्त करता है, तब वहाँ सामाजिक चेतना का स्वरूप अधिक स्पष्ट होता है।

इक्कीसवीं सदी के गीतकाव्य में सामाजिक चेतना बहुआयामी और व्यापक स्वरूप में अभिव्यक्त हुई है। समकालीन गीतकार ने प्रेम और सौन्दर्य की पारम्परिक अनुभूतियों को बनाए रखते हुए अपने समय के सामाजिक यथार्थ को भी रचना का विषय बनाया है। सामाजिक विषमता, स्त्री-अस्मिता, वञ्चित वर्गों की पीड़ा, श्रमिक और किसान जीवन, पर्यावरण-सङ्कट, वैश्वीकरण,

उपभोक्तावाद, नगरीकरण, राजनीतिक विसङ्गतियाँ, भ्रष्टाचार, युद्ध और हिंसा, सांस्कृतिक अस्मिता, राष्ट्रीय चेतना तथा तकनीकी जीवन के प्रभाव जैसे अनेक विषय आधुनिक गीतकाव्य में सामाजिक चेतना के विविध रूपों को उद्घाटित करते हैं।

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर डॉ. हर्षदेव माधव सामाजिक-चेतना के विषय में लिखते हैं कि-

उपेक्षितान् प्रति प्रतिबद्धः करुणामूलः

सामाजिकवास्तववादः ॥ वागीश्वरीकण्ठसूत्रम् 2/2

डॉ. महाराजदीन पाण्डेय ‘विभाष’ लिखते हैं कि- यहाँ छोटा बड़ा प्रत्येक पद खरीदी और बेची जाने की चीज है। तू व्यर्थ उसके लिए आतुर है, वह न तेरा है और न मेरा, वह तो सुलभ है केवल मायावियों को।

मायिकैर्लभ्यमिह पण्यं पदं महदस्तु लघु वा

आतुरो वृथा पश्यसि तावकं न च मामकीनम् ॥

डॉ.महाराजदीन पाण्डेय 'विभाष' कहते हैं कि- सामने एक तरफ
कुआँ है, दूसरी तरफ खाई ठहर कर सोच रहा हूँ, जाऊँ तो किधर
जाऊँ |

एकतः परिखाऽन्यतः कूपः पुरः

कांदिशीकः स्थितः कुर्वन्श्चिन्तनम् ||

डॉ.महाराजदीन पाण्डेय 'विभाष' लिखते हैं कि- इस शोर-शराबे
में चुप रह पाना मुश्किल है। परन्तु बोलना भी तलवार की धार
पर चलना है |

मौनमिह धीयते नैव कोलाहले

उक्तिरातन्यते नासिधारातले ||

दलितों के प्रति प्रो.हरिदत्त शर्मा का महनीय चिन्तन है दलित
आज पिस रहा है और शासक उन्हीं के हिस्से के पैसे से करोड़पति
एवं अरबपति बने बैठे हैं | इस पर वे लिखते हैं-

दलितानां हितकराः शासका

निजगृहभरणे लम्नाः |

कोट्यर्बुदधनपतयो जाता

विविधविलासविमग्नाः ||

नो लज्जा नैवावगुण्ठनम् !

राष्ट्रलुण्ठनं देशलुण्ठनम् ||

मानवीय संवेदना के विषय में डॉ.कौशल तिवारी लिखते हैं-

सम्मर्दोऽयं देवालयं परितः |

याचकीभूतो देवालयं परितः |

उपदेशक! सुखं नास्ति यदि तत्र तर्हि

कथं मेलापको मदिरालयं परितः ||

'मनो दूयते' नामक इस गीत में डॉ.आशाराम त्रिपाठी समाज में
व्याप्त दहेज-प्रथा और स्त्री उत्पीड़न की भयावह स्थिति को
उजागर करते हैं |

अद्य दृष्ट्वा समाजं मनो दूयते,

अद्य दृष्ट्वा समाजं मनो दूयते ||

बालिकैका शुभाङ्गी मया लोकिता,

देहयष्टिश्च तस्याः प्रहारैः क्षता,

नग्नदेहा सती लुञ्जिता मर्दिता,

सा क्षुधार्ता पिपासाकुला ज्वालिता,

यौतकस्यैव गाथा सदा श्रूयते,

अद्य दृष्ट्वा समाजं मनो दूयते,

अद्य दृष्ट्वा समाजं मनो दूयते ||

x x x

शिक्षिताः पण्डिताः वैभवैर्नन्दिताः

सन्ति सर्वे मदन्धाः महालोलुपाः |

अस्ति वार्ता त्वयं मित्र ! हास्यास्पदा,

यौतकं राजमार्गेषु निन्दन्ति ते |

हा चरित्रं समाजेऽद्य लोलुप्यते,

अद्य दृष्ट्वा समाजं मनो दूयते,

अद्य दृष्ट्वा समाजं मनो दूयते ||

कविवर प्रो.हरिदत्त शर्मा नगर में मानवता को खोजते हैं | उनको
अच्छा मनुष्य, मानवता, बन्धुता चाहिए, किन्तु सर्वत्र लोग डरे
हुए हैं, आत्मा जड़ हो गई है, चरों और अँधेरा छाया है और सर्वत्र
निराशा की स्थिति है | वे लिखते हैं कि-

अन्धं तमो जडीकृत आत्मा

प्रसूता दानवता!

मानवतां हि गवेषयामि हा

क्व गता मानवता !!

जनो जनाद भीतो ह्यनिशं

सन्धार्य विषं वैरम् |

गलच्छेदनं कृत्वान्येषां

चरति सुखं स्वैरम् ||

पारस्परिकसाधुसम्बन्धानां छिन्ना मृदुता

क्व....

x x x

कथितस्त्यागपूर्वकं भोगो

धर्मयुतः कामः |

आचारः परधर्मः कर्मणि

नोक्तः विश्रामः||

समग्रा हि वसुधैव कुटुम्बं ह्युद्घोषणा कृता

क्व....॥

भ्रूणहत्या पर आधारित डॉ.केशव प्रसाद गुप्त का यह गीत समाज में बेटियों के साथ होने वाले अन्याय को उजागर करता है। इस गीत में उस अजन्मी कन्या की पीड़ा है, जो जन्म लेने से पहले ही मार दी जाती है।

त्वत्कुक्षौ वसाम्यहं नित्यं मा मां मारय मातः।

अयि ! वज्रं किं कुरुषे हृदयं, मा मां मारय मातः ॥

ईहे क्रीडनं क्रोडे त्वदीये।

देहि शुभाश्रयं भवने स्वकीये ॥

गृहं तवैव भविष्यति रम्यं, मा मां मारय मातः !

अयि ! वज्रं किं कुरुषे हृदयं, मा मां मारय मातः !!

x x x

उचितं नैवास्ति मदीयहिंसनम्।

कुरुष्व यत्नतः सुतासुरक्षणम् ॥

विनयामि ममापि जन्म देयं, मा मां मारय मातः।

अयि ! वज्रं किं कुरुषे हृदयं, मा मां मारय मातः ॥

देश की बिगड़ती स्थिति को अपने 'खलानां गतिः' गीत में डॉ.केशव प्रसाद गुप्त लिखते हैं कि-दुष्ट व्यक्ति सज्जन व्यक्ति को मार रहा है, काट रहा है कोई बोलने वाला नहीं है। रेलयान, विमान, सभा, संगोष्ठी, मन्दिर, मस्जिद आदि स्थानों पर आए दिन विस्फोट हो रहे हैं। कवि लिखता है कि हे प्रभु! इन दुष्टों से देश की रक्षा कीजिए।

निन्द्यते दुर्जनानां सदा सङ्गतिः।

शोचनीयाऽस्ति लोके खलानां गतिः ॥

भीष्मविस्फोटको हन्त ! तैर्युज्यते।

निर्बलानां समूहस्ततो हन्यते ॥

वर्धते पीडने भूरि तेषां मतिः।

शोचनीयाऽस्ति लोके खलानां गतिः ॥

x x x

हन्यतां पापरक्तान् स्वयं हे प्रभो !

रक्ष्यतां जीवनं सज्जनानां विभो !!

दृष्यते नीचकृत्यैस्तु नः संस्कृतिः।

शोचनीयाऽस्ति लोके खलानां गतिः ॥

प्रेम शङ्कर शर्मा 'प्रेम' लिखते हैं कि- दुर्जनता ने इस तरह अपना पैर फैला लिया है कि समाज में आज सज्जनता का नाम मिटता सा जा रहा है।

नष्टं भ्रष्टं नो व्याकरणम्

स्पष्टं स्पष्टं हि सतां मरणम् ॥

दुष्टः प्राप्नोति सुसम्मानम्

सन्तश्च सहन्ते ह्यपमानम्

कष्टं कष्टं हि सदाचरणम् ॥2॥

समाज की बिगड़ती हुई स्थिति के विषय में पद्मश्री प्रो.बृजेश कुमार शुक्ल लिखते हैं कि-

मालविकाग्निमित्राख्यं पाठयतो गुरोः पुरः

छात्री नर्तनमारेभे गीतं च मधुरं जगौ ॥

दृश्यमेंतत्समालोक्य साश्चर्यं गुरुक्तवान्

मालविकाऽसि त्वं शिष्ये गणदासोऽस्म्यहं तव ॥

तात्पर्यमन्यथा मत्वा सर्वे छात्रा जगुस्तदा

एषा मालविका रामा चान्निमित्रस्तथाहि त्वम् ॥

घोरे कलियुगे चाऽस्मिन् गुरवः प्रवदन्ति हि

अहो सौन्दर्यमापन्ना शिष्या भोग्या सुदुर्लभा ॥

निष्कर्ष- इस प्रकार हम कह सकते हैं कि-इक्कीसवीं सदी के गीतकाव्य में सामाजिक चेतना केवल विषय-विस्तार नहीं, बल्कि गीत की दृष्टि में आया एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है। समकालीन गीत अब केवल 'मन की बात' नहीं करता, बल्कि 'समाज के मन' को भी अभिव्यक्ति देता है। यही उसकी समकालीनता, प्रासंगिकता और सामाजिक सार्थकता का प्रमुख आधार है।

संदर्भ सूची :

1. मौनवेधः, डॉ.महाराजदीन पाण्डेय 'विभाष', संग्रह टाइम्स प्रकाशन नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2017 ई., पृष्ठ संख्या 50.
- 2.मौनवेधः, डॉ.महाराजदीन पाण्डेय 'विभाष', संग्रह टाइम्स प्रकाशन नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2017 ई., पृष्ठ संख्या 55
3. मौनवेधः, डॉ.महाराजदीन पाण्डेय 'विभाष', संग्रह टाइम्स प्रकाशन नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2017 ई., पृष्ठ 56
- 4.नवेक्षिका, प्रो.हरिदत्त शर्मा,, राका प्रकाशन 40 ए, मोतीलाल नेहरू रोड इलाहाबाद-2, प्रथम संस्करण 2014 ई., पृष्ठ संख्या 65
5. स्मर्तव्योऽहं तदा, डॉ.कौशल तिवारी, एजुकेशनल भूक सर्विस, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2022 ई., पृष्ठ संख्या 37
- 6.अर्पनीयं सदा सुन्दरं सुन्दरम्, डॉ.आशाराम त्रिपाठी, प्रकाशक डॉ.आशाराम त्रिपाठी, सी-2/1 ओ, विशेष खण्ड गोमतीनगर लखनऊ-226010, प्रथम संस्करण 2007 ई, पृष्ठ संख्या49-50
- 7.लसल्लतिका, प्रो.हरिदत्त शर्मा, राका प्रकाशन 40 ए, मोतीलाल नेहरू रोड इलाहाबाद-2, प्रथम संस्करण 2004 ई., पृष्ठ संख्या 47-49
- 8.कालिन्दी, डॉ.केशव प्रसाद गुप्त, संरचना प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2017 ई., पृष्ठ संख्या 138
9. कल्लोलिनी, डॉ.केशव प्रसाद गुप्त, राका प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2015 ई., पृष्ठ संख्या 95
- 10.गीर्गीतिः, प्रेम शङ्कर शर्मा 'प्रेम' साहित्य भण्डार प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2011 ई., पृष्ठ संख्या 46
- 11.श्रुतिमञ्जरी, प्रो.बृजेश कुमार शुक्ल,सत्यम् पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2013 ई.,पृष्ठ संख्या 42